केंद्रीय संस्कृत विश्व विद्यालय दिल्ली एवं प्राकृत भाषा फाउंडेशन के संयुक्त तत्वावधान में

राष्ट्रिय प्राकृत भाषा विद्वत्संवाद गिरनार जी

28 जनवरी से 30 जनवरी 2026

परमपूज्य भारतगौरव राष्ट्रसंत चतुर्थपट्टाचार्य

प्राकृताचार्य 108 सुनीलसागरजी महाराज

आलेख का विषय

संस्कृत नाटकों में प्राकृत भाषा का प्रयोग मृच्छकटिकम् के संदर्भ में

प्रस्तुति:-

प. लोकेश जैन शास्त्री गनोड़ा

संस्कृत प्रवक्ता एवं प्रशिक्षक गनोड़ा बांसवाड़ा राजस्थान 9667142325

Edit with WPS Office

संस्कृत नाटकों में प्राकृत भाषा का प्रयोग मृच्छकटिकम् के संदर्भ में

प. लोकेश जैन शास्त्री गनोड़ा 9667142325

नाटकों में प्राकृत भाषा का महत्व यह है कि यह जनसाधारण की भाषा थी, जिससे संस्कृत नाटकों को आम लोगों तक पहुँचाया जा सके और उनकी सामाजिक स्थिति को दर्शाया जा सके; महिलाओं, नौकरों और निम्न वर्ग के पात्रों के लिए प्राकृत का प्रयोग हुआ, जिससे नाटकों में स्वाभाविकता और यथार्थता आई, तथा विभिन्न प्राकृतों (जैसे शौरसेनी, मागधी) के प्रयोग से क्षेत्रीय और सामाजिक विविधता भी प्रदर्शित होती थी, जो आज के साहित्य के लिए महत्वपूर्ण है।

नाट्य प्राकृत भारतीय- आर्य भाषाओं के विकास के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनमें प्रयुक्त बोलियों और व्याकरणिक रूपों से प्राचीन भाषाओं की समझ विकसित होती है।

संक्षेप में, प्राकृत भाषा ने संस्कृत नाटकों को जीवंत, सुलभ और सामाजिक रूप से प्रासंगिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे यह भारतीय नाट्य परंपरा का एक अभिन्न अंग बन गई।

भाषा और भाषाविज्ञान के रहस्यमय क्षेत्र में कई अद्भुत चीज़ें छिपी हैं, और ऐसा ही एक अद्भुत चमत्कार है प्राकृत की यह गहन खोज न केवल इसके आकर्षक इतिहास को उजागर करती है, बल्कि इसके प्रमुख समूहों में भी गहराई से उतरती है, प्राकृत में लिखी गई प्रसिद्ध साहित्यिक कृतियों पर प्रकाश डालती है, तथा यूपीएससी उम्मीदवारों के लिए इसकी स्थायी प्रासंगिकता पर विस्तार से प्रकाश डालती है।

समय की भूलभुलैया में उतरते हुए, प्राकृत की उत्पत्ति प्राचीन भारतीय ग्रंथों में प्रयुक्त वैदिक संस्कृत से हुई है। जहाँ संस्कृत अभिजात वर्ग और विद्वानों की भाषा थी, वहीं प्राकृत, जिसका अर्थ है 'प्राकृतिक' या 'सामान्य', आम जनता की भाषा है।

प्राकृत के विकास को सामान्यतः तीन चरणों में वर्गीकृत किया जाता है:

प्रारंभिक प्राकृत -(लगभग तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व पहली शताब्दी ईसवी): यह चरण सम्राट अशोक के शासनकाल से मेल खाता है, जहां प्राकृत का शिलालेखों में बड़े पैमाने पर किया गया था, जिन्हें अशोक शिलालेखों के रूप में जाना जाता है।

प्राकृत साहित्य समय की यात्रा

प्राकृत साहित्य का समृद्ध तानाबाना प्राचीन भारतीय जनमानस के दैनिक जीवन, मूल्यों और संस्कृति को प्रतिबिम्बित करता - है। अपनी सरलता और सहजता के लिए प्रसिद्ध, प्राकृत में रचित रचनाएँ प्रेम, वीरता, नैतिकता और आध्यात्मिकता सहित विभिन्न विषयों को समेटे हुए हैं।

प्राकृत में धार्मिक ग्रंथों का एक प्रभावशाली संग्रह है, विशेष रूप से जैन आगम या प्रामाणिक साहित्य। अर्धमागधी प्राकृत में रचित ये ग्रंथ जैन दर्शन, इतिहास और अनुष्ठानों का आधार हैं। इनमें आचारंग सूत्र, सूत्रकृतांग और अन्य ग्रंथ शामिल हैं जो जैन धर्म के आध्यात्मिक और नैतिक सिद्धांतों पर गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

Edit with WPS Office

नाटक और नाटक

संस्कृत नाटक जगत में महिलाओं-, नौकरों और अन्य गैर कुलीन पात्रों के संवादों के लिए प्राकृत का प्रयोग अक्सर देखा गया है, जिससे यह नाट्य साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। भास और शूद्रक जैसे नाटककारों ने अपनी कृतियों, जैसे 'स्वप्न वासवदत्तम्' और 'मृच्छकटिक', में कुछ पात्रों के संवादों को चित्रित करने के लिए शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग किया है ।जिससे उनकी सामाजिक स्थिति की प्रामाणिकता उजागर होती है।

प्राकृत व्याकरण

वररुचि द्वारा रचित 'प्राकृत प्रकाश' और हेमचंद्र द्वारा रचित 'प्राकृत शिक्षा' जैसे ग्रंथ प्राकृत व्याकरण के नियमों और संरचनाओं का उत्कृष्ट विवरण प्रस्तुत करते हैं, जो भाषा अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण साहित्यिक कृतियों के रूप में कार्य करते हैं।

इस प्रकार, प्राकृत साहित्य न केवल भाषा की हमारी समझ को बढ़ाता है, बल्कि प्राचीन भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक लोकाचार की भी झलक दिखाता है।

प्राकृत में प्रसिद्ध साहित्यिक कृतियाँ

साहित्य जगत में प्राकृत का प्रभाव गहरा है। प्राकृत की कुछ प्रमुख साहित्यिक कृतियाँ इस प्रकार हैं:

जैन विहित साहित्य (अगमस) : जैन धर्म के प्राथमिक ग्रंथ अर्धमागधी प्राकृत में लिखे गए थे।

गाह सत्तासाई (सात सौ श्लोक): रोमांटिक और कामुक छंदों का यह संकलन, राजा हाला द्वारा रचित, महाराष्ट्री प्राकृत में लिखा गया था।

शूद्रक और भास के प्राकृत नाटक : शूद्रक और भास के नाटकों जैसे कई भारतीय नाटकों में महिलाओं और आम लोगों के संवादों के लिए प्राकृत का प्रयोग किया गया।

प्राकृत भाषा का प्रभाव

प्राकृत का प्रभाव समय और भौगोलिक सीमाओं से परे है तथा भारतीय और दक्षिणपूर्व एशियाई संस्कृतियों के विभिन्न - पहलुओं में व्याप्त है।

भारतीय भाषाओं पर प्रभाव प्राकृत कई आधुनिक भारतीय भाषाओं की मूल भाषा है। महाराष्ट्री प्राकृत ने मराठी का मार्ग प्रशस्त किया, शौरसेनी प्राकृत ने हिंदी और पंजाबी की नींव रखी, और मगधी प्राकृत बंगाली, असमिया और उड़िया में विकसित हुई। कई स्थानीय भाषाओं के शब्दकोश, व्याकरण और ध्वनिविज्ञान मेंआज भी प्राकृत के अंश मौजूद हैं।।

प्राकृत भाषा का महत्व

प्राकृत भाषा अभिजात वर्ग और आम जनता के बीच सांस्कृतिक सेतु का काम करती थी। आम लोगों की भाषा होने के कारण, बाने को प्रतिबिंबित करती थी, जिससे हमें अपने इतिहास और विरासत को -यह प्राचीन भारत के वास्तविक सामाजिक ताने बेहतर ढंग से समझने में मदद मिली।

प्राकृत की यह गहन खोज न केवल इसके आकर्षक इतिहास को उजागर करती है।

समय की भूलभुलैया में उतरते हुए, प्राकृत की उत्पत्ति प्राचीन भारतीय ग्रंथों में प्रयुक्त वैदिक संस्कृत से हुई है। जहाँ संस्कृत अभिजात वर्ग और विद्वानों की भाषा थी, वहीं प्राकृत, जिसका अर्थ है 'प्राकृतिक' या 'सामान्य', आम जनता की भाषा के रूप में उभरी।

Edit with WPS Office

महाकवि शूद्रक का नाटक मृच्छकटिकम् और उसकी भाषा

परम्परा से नाता नहीं तोड़ा जा सकता है। अतीत का प्रभाव वर्तमान पर पड़ता ही है, फिर चाहे वो हमारे समाज पर हो या फिर भाषा पर। हमारी सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत एक भाषा ही नहीं, दर्शनशास्त्र, इतिहास और साहित्य भी है। संस्कृत भाषा में कई साहित्य और नाटकों की रचना हुई है। इन साहित् यों के माध् यम से हमें अपने कल तथा उससे आज पर पड़े प्रभाव को जानने में सहायता मिलती है। ऐसा ही एक संस्कृत साहित्य है 'मृच्छकटिकम्' जिसमें उल्लिखित प्राकृत भाषा हमारी वर्तमान हिन्दी के लिए मार्ग प्रशस्त करती है। यह भाषा के विकास का एक रूप है, जो संस्कृत से प्राकृत की ओर अग्रसर हुआ और आगे चलकर पालि, अपभ्रंश बना और अंततः जिसने हिन्दी का स्वरूप धारण किया।

'मृच्छकटिकम्' यानी मिट्टी की गाड़ी संस्कृत साहित्य की सबसे प्रसिद्ध नाट्यकृतियों में से एक है, जिसे शूद्रक द्वारा रचित बताया जाता है। शूद्रक का जीवन-काल काफी विवाद का विषय रहा है। वे कौन थे, उनका जन्म कहां और कब हुआ, ऐसे तमाम सवालों के उत्तरों में संस्कृत साहित्य के विद्वान एकमत नहीं हैं। कुछ लोग उन्हें राजा शूद्रक के नाम से जानते हैं तो अन्य कुछ लोग का कहना है कि शूद्रक कोई था ही नहीं, वह एक कल्पित पात्र है।

एक मत के अनुसार यह नाटक किसी अन्य (महाकवि भास) ने लिखा था तथा इसका नाम 'दरिद्र चारुदत्त' है। दरिद्र चारुदत्त भाषा और कला की दृष्टि से 'मृच्छकटिकम्' से पुराना नाटक है, जो चार अंकों में लिखा था, बाद में उसी को दस अंकों में विकसित करके राजा शूद्रक के नाम से प्रचारित कर दिया गया, और निरन्तर सम्पादित होने से यह प्रसिद्ध हो गया। परन्तु पुराने समय में शूद्रक कोई राजा था इसका उल्लेख हमें कादम्बरी, कथासरित्सागर, हर्षचरित और राजतरंगिणी जैसी रचनाओं में मिलता है। मृच्छकटिकम् की प्रस्तावना में ऐसे तीन श्लोक दिए गए हैं, जिनमें नाट्यकार स्वयं अपना परिचय देता है और अपनी मृत्यु का वर्णन करता है। अत: इन्हें काल्पनिक नहीं कहा जा सकता।

शूद्रक द्वारा रचित मृच्छकटिकम् सामाजिक नाटकों में प्रमुख स्थान रखता है और अपने काल की सामाजिक स्थिति का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता है। सदियों पुराना यह नाटक वास्तव में काफी रोचक है। मृच्छकटिकम् की शैली सरल है। इसमें प्राकृत भाषा की सभी शैलियों का प्रयोग मिलता है। शूद्रक ने राज परिवार को छोड़कर समाज के मध्यम वर्ग के लोगों को अपने नाटक का पात्र बनाया। इसके हिंदी अनुवादित नाटक का वीडियो आप नीचे देख सकते हैं। शूद्रक की नाट्य कला बड़ी प्रशंसनीय है।

यह नाटक उज्जयिनी के निवासी चारुदत्त नामक एक ब्राह्मण की कहानी पर आधारित है, जो अपनी उदारता के कारण निर्धनता की स्थिति में पहुंच जाता है। उसकी उदारता और मृदु व्यवहार पर एक गणिका (वैश्या) वसंतसेना, उसके प्रति आकर्षित हो जाती है। उक्त नाटक चारुदत्त तथा वसंतसेना के बीच के निःस्वार्थ तथा निश्छल प्रेम पर केंद्रित है। इसी के साथ आर्यक के राजा (पाकल) और उनके साले (शकार) की राजनीतिक कथा भी जुड़ी हुई है। प्राचीन संस्कृत नाटकों में 'विदूषक' नाम का पात्र भी सामान्यतः मौजूद रहता था। वह प्रायः मुख्य पात्र नायक का मित्र होता था। उक्त नाटक में चारुदत्त का मित्र मैत्रेय विदूषक की भूमिका निभाता है। यह नाटक नागरिक जीवन का भी यथावत् चित्र अंकित करता है। इस विशेषता के कारण यह यथार्थवादी रचना संस्कृत और हिंदी साहित्य में अनोखी है। इसका अनुवाद हिंदी के साथसाथ विविध भाषाओं में - हो चुका है और भारत तथा अमेरीका, रूस, फ्रांस, जर्मनी, इटली, इंग्लैण्ड के अनेक रंगमंचों पर इसका सफल अभिनय भी किया जा चुका है।

मृच्छकटिकम् की कथावस्तु कवि प्रतिभा से प्रसूत है। 'उज्जयिनी'का निवासी सार्थवाह विप्रवर चारूदत्त इस प्रकरण का नायक है और दाखनिता के कुल में उत्पन्न वसंतसेना नायिका है। चारूदत्त की पत्नी 'धूता' पूर्वपरिग्रह के अनुसार ज्येष्ठा है जिससे दाक्षिण्य के कारण -चारूदत्त को 'रोहितसेन' नाम का एक पुत्र है। चारूदत्त किसी समय बहुत समृद्ध था परन्तु वह अपने दया

Edit with WPS Office

निर्धन हो चला था, तथापि प्रामाणिकता, सौजन्य एवं औदार्य के नाते उसकी महती प्रतिष्ठा थी। वसंतसेना नगर की शोभा है- गुणसंपन्ना एवं साधारण नवयौवना नायिका उत्तम प्रकृति की है और वह -अत्यन्त उदार, मनस्विनी, व्यवहारकुशला, रूप आसाधारण गुणों से मुग्ध हो उस पर निर्व्याज प्रेम करती है। नायक की एक साधारण और स्वीया नायिका होने के कारण यह संकीर्ण प्रकरण माना जाता है।

'मृच्छकटिकम्' की कथा का केन्द्र है-'उज्जयिनी'। वह इतना बड़ा नगर है कि 'पाटलिपुत्र' का संवाहक उसकी प्रसिद्धि सुनकर बसने को,धन्धा प्राप्त करने को आता है। हमें इसमें चातुर्वर्ण्य का समाज मिलता है– 'ब्राह्मण', 'क्षत्रिय', 'वैश्य' और 'शूद्र'। ब्राह्मणों का मुख्य काम पुरोहिताई था, पर वे राज-काज में भी दिलचस्पी लेते थे। इस कथा में एक बड़ी गम्भीर बात यह है कि यहाँ ब्राह्मण, व्यापारी और निम्नवर्ण मिलकर मदान्ध क्षत्रिय राज्य को उखाड़ फेंकते हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है और फिर सोचने की बात यह है कि इस कथा का लेखक राजा शूद्रक माना जाता है जो क्षत्रियों में श्रेष्ठ कहा गया है।

मृच्छकटिकम् नाटक में संस्कृत और विभिन्न प्रकार की प्राकृत भाषाओं का अद्भुत मिश्रण है, जहाँ उच्च वर्ग (राजा, ब्राह्मण) संस्कृत बोलते हैं, वहीं निम्न वर्ग, स्त्रियाँ (जैसे वसंतसेना) और आम लोग विभिन्न प्राकृत भाषाएँ (जैसे महाराष्ट्री, शकार, चंडालिका) बोलते हैं, जिससे समाज के सभी वर्गों की वास्तविकता और चरित्रों की मौलिकता झलकती है, और यह नाटक प्राकृत भाषा के विकास का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। भाषा प्रयोग की विशेषताएँ:

पात्रों के अनुसार भाषा: शूद्रक ने पात्रों के सामाजिक स्तर के अनुसार भाषाओं का प्रयोग किया है; शिक्षित और उच्च वर्ग संस्कृत में और आम जनता प्राकृत में।

सरल और स्वाभाविक शैली: प्राकृत भाषा के प्रयोग से नाटक की शैली सरल, सुबोध और जनजीवन के करीब बन गई है, जो इसे अन्य संस्कृत नाटकों से अलग करती है।

जनकाव्य का स्वरूप: यह नाटक तत्कालीन जनजीवन की झाँकी प्रस्तुत करता हैसंस्कृति और आम -, जहाँ प्राकृत भाषाएँ जन लोगों की भावनाओं को व्यक्त करती हैं, जिससे यह एक 'जनकाव्य' भी बन जाता है।

भाषा विकास का प्रमाण: मृच्छकटिकम् की प्राकृत भाषाएँ संस्कृत से पाली, अपभ्रंश होते हुए हिंदी के विकास की प्रक्रिया को दर्शाती हैं।

उदाहरण:

संस्कृत: ब्राह्मण चारुदत्त और अन्य उच्च शिक्षित पात्र संस्कृत बोलते हैं।

प्राकृत: वसंतसेना (गणिका), चोर, सिपाही और अन्य निम्न वर्ग के पात्र प्राकृत बोलते हैं, जिससे उनके व्यक्तित्व में निखार आता है।

विटः (खगतम् ।) -दुष्करं विषमौषधीकर्तुम् । भवतु । एवं तावत् । -(प्रकाशम् ।) काणेलीमातः, एषा वसन्तसेना भवन्तमभिसा रयितुमागता ।

Edit with WPS Office

वसन्तसेना सन्तं पावंम् । सन्तं पावम् । (क)

शकारः देवकम् । (ख)-(सहर्षम् ।) भावे भावे, मं पबलपुलिशं मणुश्शं वाशु

शकारः- तेण हि अपुव्वा शिली शमाशादिदा । तरिंश काले मए लोशाविदा, शंपदं पादेशुं पडिअ पशादेमि । (ग)

विटः- साध्वभिहितम् ।

शकारः-त्तिके, अम्बिके गुणु मम विण्णत्तिम् । (घ)- एशे पादेशुं पडेमि । (इति वसन्तसेनामुपसृत्य ।) अ

एशे पडामि चलणेशु विशालणेत्ते

हश्तञ्जलिं दशणहे तव शुद्धदन्ति ।

जं तं मए अवकिदं मदणातुलेण

तं खम्मिदाशि वलगत्ति तव म्हि दासे ॥ १८ ॥ (ङ)

वसन्तसेना (सक्रोधम् ।) अवेहि । अणज्जं मन्तेसि । (च) (इति पादेन ताडयति ।)-

(क) शान्तं पापम् । शान्तं पापम् ।

(ख) भाव भाव, मां प्रवरपुरुषं मनुष्यं वासुदेवकम् ।

(ग) तेन ह्यपूचा श्रीः समासादिता । तस्मिन्काले मया रोषिता, सांप्रतं पायोः पतित्वा प्रसाद्यामि ।

(घ) एष पादयोः पतामि। मातः, अम्बिके, शृणु मम विज्ञप्तिम् ।

(ङ) एप पतामि चरणयोर्विशालनेत्रे हस्ताञ्जलिं दशनखे तव शुद्धदन्ति ।

यत्तव मयापकृतं मदनातुरेण तत्क्षामितासि वरगात्रि तवास्मि दासः ॥(च) अपेहि । अनायै मत्रयसि ।

संस्कृत महाकाव्यों की शैली पर ही प्रायः प्राकृत भाषा में काव्यसाहित्य के सृजन का -साहित्य की रचना हुई है। इस काव्य-प्रारम्भ ईसा की पहली शताब्दी से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार का साहित्य धार्मिक उपदेशों एवं धार्मिक चरितों से राग्बद्ध न होकर एक स्वतन्त्र रचना है। सररात की दृष्टि रो प्राकृतकाव्यों का विशेष महत्व है। इसमें श्रृंगार रस को विशेष स्थान मिला है। -प्रायः इस युग में मुक्तक काव्यों की रचना हुई, जिनका कोई पूर्वापर सम्बन्ध नहीं होता तथा जो एक ही पद्य में पाठक को चमत्कृत कर देने की क्षमता रखते है। इन काव्यो में गीतात्मकता का पुट होने से गेय तत्व का भी समावेश है।"*

संस्कृत नाटकों में प्राकृत भाषा का विशेष महत्व रहा। इसकी शुरूआत अश्वघोष, भास, शुदक, कालिदास, श्रीहर्ष, भवभूति, विशाखदत्त, भट्टनारायण, सोमदेव आदि नाटक कार्यों के साहित्य में प्राकृत भाषा पायी जाती है। विशुद्ध प्राकृत भाषा में लिखे कर्पूरमंजरी, विलासवती, चन्द्रलेखा, अनन्त सुन्दरी और सिंगारलञ्जरी, इन पाँच सट्टकों में से विलासवती को छोड़कर अवशिष्ट चार सट्टक उपलब्ध हैं। नाट्यशास्त्र के टीकाकर अभिनवगुप्त ने (इं. की १०वीं शताब्दी) सट्टक को नाटिका के समान बताया है। हेमचन्द्र ने काव्यानुशासन में कहा है कि सट्टक की रचना एक ही भाषा में होनी चाहिए।

Edit with WPS Office

"संस्कृत नाटकों में प्राकृत भाषाओं का प्रथम नाटकीय प्रयोग संस्कृत नाटकों में उपलब्ध होता है। भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र (१७.३१.४३) में धीरोदात्त और धीर प्रशान्त नायक, राजपत्नी, गणिका और श्रोत्रिय ब्राह्मण आदि के लिए संस्कृत तथा श्रमण, तपस्वी, भिक्षु, चक्रधर, भागवत, तापस, उन्मत, बाल, नीच, ग्रहों से पीडित व्यक्ति, स्त्री, नीज जाति और नपुसको के लिए प्राकृत बोलने का निर्देश किया है।"

संस्कृत नाटकों के अध्ययन करने से पता लगता है कि इन नाटकों में उच्च वर्ग के पुरुष, अग्रमहिषियों, राजमन्त्रियों की पुत्रियाँ चाकर आदि निम्न वर्ग के लोग प्राकृत मे बातचीत करते -और वेश्याएँ संस्कृत तथा साधारणतया स्त्रियाँ, विदुषक, श्रेष्ठी, नौकर है। कालिदास द्वारा रचित नाटको मे प्राकृत भाषा सभी अद्यम पात्रों द्वारा बोली जाती है।

इन नाटकों में धूर्त, विट, पाखण्डी, चेट, चेटी, विट, नपुसक, भूत, प्रेत, पिशाच, विदूषक, हीन पुरूष आदि द्वारा कालिदास द्वारा रचित सस्कृत नाटकों में प्राकृत भाषा आदि पात्रो द्वारा बोली जाती है।

कालिदास ने अपने नाटकों में प्राकृत भाषा का प्रयोग किया जिसका सम्बन्ध अद्यम पात्रों से है। उनके सभी नाटकों में गौण पात्र प्राकृत भाषा का प्रयोग करते हैं। जिसके द्वारा विभिन्न विचारों को व्यवहारिकता वार्ता लाप एवं व्यावहारिकता को व्यक्त करते हैं। इनकी रचनाओं में गद्य के लिए प्राय शौरसेनी और पद्य के लिए प्रायः महाराष्ट्री का प्रयोग मिलता है। जिसे निम्न श्लोक के माध्यम से व्यक्त किया जा रहा है।

शकुन्तला महाराष्ट्री में गाती है-

"तुज्त ण जाणो हिअअं मम उण कामो दिवापि रतिम्मि।

णिग्धिण तवई बलीअं तुइ वुत्तमणोरहाइ अंगाई।।"

इसी क्रम में मालविकाग्निमित्रम् और विक्रमोर्वशीयम् नाटकों में अद्यम पात्रों के द्वारा प्राकृत भाषा का प्रयोग किया है। जिसमें परिचारिका, विदुषक, चेटी आदि सभी प्राकृत भाषा बोलती है। विक्रमोर्वशीयम् मे रम्भा, मेनका, बित्रलेखा, उर्वशी आदि गहिषी, किराती, ता-अप्सरायें राजपसी आदि स्त्री पात्र तथा विदूषक प्राकृत भाषा बोलते हैं।

अपभ्रश में कुछ सुन्दर गीत है-

"हउं पई पुछिछामि व्यावखहि गअवरू ललिअपहारे णसिअतरुवरु।

दूरविणिज्जि अससहरकन्ती दिट्ठी पिअ पई समुहु जन्ती।।""

Edit with WPS Office

भास ने भी अपने नाटको में प्राकृत साहित्य का प्रयोग किया है। जिसमें निःसंदेह रूप से उनके नाटकों में शौरसेनी व्याकरण पायी जाती है। चाँरूदत्त और बसन्त सेन के प्रेम का मार्मिक चित्रण किया है। जिसे निम्न प्रकार से व्यक्त किया गया है-

"चिट्ठ चिट्ठ वशञ्चशेणिए। चिट्ठ

किं याशि धावशि पधावशि पक्खलन्ती

शाहु प्पशीदण मलीअशि चिट्ठ दाव।

कामेण शम्पदि हि जज्झई मे शलीलं

अंगालमज्म्तपडिदे विअ चम्मखंडे।।"

प्राकृत साहित्य का इतिहास भास के नाटको के अतिरिक्त अन्य नाटक कार्यों ने भी उसे प्रयोग किया है। शुद्रक ने मृच्छकठिक में प्रयोग किया है। जिसमें विभिद्यता और सापेक्षता है। इसके अलावा ग्रियर्सन ने भी अपने विचारों के द्वारा भारतीय प्राकृत भाषा को अपने नाटकों में वरियता दी है।

मृच्छकटिकम् नाटक में राजा का साला शकार मागधी में वसन्त सेना वैश्या का वित्रण किया है जो अद्योलिखित है-

"एशा णाणकमूशि-कामकशिका मच्छाशिका लाशिका।

णिण्णाशा कुलणाशिका अवशिका कामस्स मञ्जूशिका।

एशा वेशवहू शुवेशणिलआ वेशंगणा वेशिआ

एशे शे दश णामके मयि कले अज्जावि में णेच्छदि।।"

इसी क्रम में भवभूति ने अपने नाटकों में प्राकृत भाषा का प्रयोग उनके नाटकों में मिलता है। भवभूति के नाटक महावीरचरितम्, साथ प्राकृत भाषा का प्राधान्य पाया जाता है। -मालतीमाधवम् और उत्तररामचरितम् नाटकों में संस्कृत भाषा के साथसंस्कृति के आदर्श पर उन्होंने शौर सेनी प्राकृत भाषा का प्रयोग किया है। भरत के नाट्यशास्त्र में शटक और नाटिका का उल्लेख नहीं मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि भरत ने इन भाषाओं का उल्लेख नहीं किया है। टीका कार्य अभिनव गुप्ता ने संस्कृत और प्राकृत दोनों ही अपनी भाषा के माध्यम से उन भाषाओ को व्यक्त किया है।

"साहित्य दर्पण (६.२७६-२७७) के अनुसार राट्टक पूर्णतया प्राकृत में ही होता है और अद्भुत रस की इसमें प्रधानता रहती है। कर्पूरमजरीकार (१६) ने सट्ट को नाटिका के समान बताया है। जिसमें प्रदेश और विष्कम नहीं होते हैं। सटटक में अंक को यवनिकातर कहा जाता है। प्राय किसी नायिका के नाम पर ही सटक का नाम रखा जाता है।

कालिदास के अतिरिक्त भवभूति ने अपने नाटकों में प्राकृत भाषा का प्रयोग किया जिसका सम्बन्ध जीवन के विभिन्न के विभिन्न गुण विषयों में दिखलाई पढता है। प्राकृत की व्याकरण छन्दकोष तथा अलंकारग्रन्थ ६ शताब्दी से लेकर 18वीं शताब्दी तक प्राकृत व्याकरण की सहायता से जो सुनिश्चित और सुगवित रूप सस्कृत को मिला, प्राकृत उससे वचित रह गई। व्याकरणो में वररूचि को प्राकृत व्याकरण सबसे अधिक व्यवस्थित और प्रामाणिक है। लेकिन इसके सूत्रों से अश्वघोष के नाटक खरोष्ट्री

Edit with WPS Office

लिपि के धम्मपद और अर्धमागधी में लिखे हुए जैन आगमों आदि की भाषाओं पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता। अवश्य ही पैशाची भाषा जिसका कोई भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है के नियमों का उल्लेख यहाँ मिलता है। इससे प्राकृत व्याकरणों की अपूर्णता का ही घोतन होता है।

मार्कण्डेय, भरत, कोहल, वररुचि, भामाह और बसन्त राज ने प्राकृत व्याकरणाचार्य थे जिन्होंने अपनी क्षमता के द्वारा प्राकृत व्याकरण को व्यक्त किया है। प्राकृत व्याकरण अग्रेजी साहित्य के विभिन्न विद्वानों ने ी प्राकृत व्याकरण का प्रयोग किया। भाषा के अध्ययन के लिये व्याकरण की भाँति कोश का अध्ययन भी आवश्यक है। वैदिक शब्दावली को समझने के लिये निघण्टुकोश की रचना की गई। जिस पर यास्क ने टीका लिखकर शब्दों को व्युत्पत्तिपूर्वक सिद्ध किया।

संस्कृत और प्राकृत भाषा का आपस में सम्मिश्रण है. अधिकतर नाटककारों ने अपने नाटकों उन्हें दैदीप्यमान करने का प्रयास किया जिसमें प्राचीनता और आधुनिकता का ऐतिहासिक स्वरूप दिखलाई पड़ता है। वर्तमान समय में दोनों भाषाओं की साहित्य के क्षेत्र में पराकाष्ठा है। जो व्याकरण और भाषा की दृष्टि से परिवेस्ठित है।

शोध सार प्राकृत और संस्कृत भाषा को सृजनात्मक रूप देने में शताब्दियों गुजर गयीं मानव इतिहास के विकास में मौलिक योगदान रहा है। मानव जाति की प्राचीनतम् पुस्तक ऋषि की ऋचाओं के जन्मदाताओं ने अपने मौलिक विचारों, भावो, कल्पनाओ और धारणाओं को मूर्तरूप देने के लिए उस समय की शैशव कालीन अनधिवसित भाषा को सशक्त बनाने मे कितना श्रम किया होगा। प्राकृत और संस्कृत का यह मैत्रीबंधन सृजनात्मक साहित्य में विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है।

नाटकों में दोनों भाषाओं का योगपद्य और अलंकारशास्त्रों से सैद्धान्तिक उदाहरण के लिए प्राकृत साहित्य का उपयोग निःसंशय सिद्ध करता है कि एक के ज्ञान के बिना दूसरे का ज्ञान अपूर्ण माना जाता रहा। सृजनात्मक साहित्य के अतिरिक्त, जैन धर्म दर्शन के क्षेत्र में प्राकृत का ही साम्राज्य था। अतः दार्शनिक विभिन्न प्रस्थानों के आचाययों के लिए भी प्राकृत का ज्ञान अपरिहार्य था।

प्रस्तुति:-

प. लोकेश जैन शास्त्री गनोड़ा

संस्कृत प्रवक्ता एवं प्रशिक्षक गनोड़ा

बांसवाड़ा राजस्थान 9667142325,6376037237

Edit with WPS Office